अनुगामियों का गान

चन्द्रमुखी कैम्पनेल्ला द्वारा लिखित

सन् १९७९ में जब श्री मुक्तानन्द आश्रम का सर्वप्रथम निर्माण हुआ, उस समय अनुग्रह बिल्डिंग के आस-पास के परिसर में शायद ही कोई हरियाली, पेड़-पौधे, झाड़ियाँ या फूल थे। तथापि, गत वर्षों में, आश्रम आने वाले बहुत-से लोगों ने यहाँ सेवा कर इस पूरे परिसर के भूदृश्य की रचना की है। मैंने अनेक बार श्रीगुरुमाई को यह कहते हुए सुना है कि यह उन लोगों का प्रेमभरा परिश्रम ही है जिसके कारण आज हम हर कहीं मनोरम प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द ले पा रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप, अनेकानेक पक्षियों को—वर्ष भर वहीं रहने वाले तथा प्रवासी पक्षियों को भी—आश्रम परिसर में आश्रय मिला है।

वह वर्ष २०११ का उजियाला दिन था; सूरज की खिली-खिली धूप सर्वत्र बिखरी हुई थी। गुरुमाई जी बगीचे में थीं, उस स्थान के ठीक बाहर वाली जगह पर, जहाँ वे दर्शन देती हैं। मैं वहीं थी और हम किसी विषय पर चर्चा कर रहे थे। बगीचों में सेवा करने वाले सेवाकर्ताओं ने पूरे बगीचे में, बल्कि अनुग्रह बिल्डिंग के सामने चारों तरफ़, सुन्दर-सुन्दर फूलों से भरी, लटकने वाली टोकरियाँ लगा दी थीं। गुरुमाई जी को यह मालूम हो गया था कि रॉबिन पक्षी अपने घोंसले, सुन्दर-सुन्दर फूलों से भरी, लटकने वाली टोकरियों में बनाना व उनमें अपने बच्चों को पालना पसन्द करते हैं। इसीलिए, गुरुमाई जी के कहने पर सेवाकर्ताओं ने उस जगह टोकरियाँ लगाई थीं।

गुरुमाई जी एक टोकरी के पास गईं जिसमें फ़्यूशा के फूल खिले थे। वह टोकरी बगीचे की सबसे ख़ास जगह पर लगी थी; गुरुमाई जी जहाँ दर्शन देती थीं वहाँ की फ़र्श-से-छत तक ऊँची खिड़कियों के ठीक सामने वह टोकरी लटक रही थी। गुरुमाई जी ने फ़्यूशा का एक फूल अपने हाथ में उठाया, उसकी डण्डी टोकरी के किनारे से बाहर लटक रही थी। पल भर के लिए गुरुमाई जी ने उस फूल की नाज़ुक पंखुड़ियों को अपनी हथेली पर टिका रहने दिया।

उन्होंने आहिस्ता-से कहा, “कितनी सुन्दर हैं!”

तभी वहाँ अचानक पंखों की फड़फड़ाहट हुई। एक रॉबिन पक्षी उस टोकरी में आ पहुँचा और उसके पीछे-पीछे उससे कुछ ही बड़ा, दूसरा भी आ गया। उन दोनों की चोंच में तिनके व छोटे-छोटे मिट्टी के ढेले भरे थे, जिन्हें उन्होंने तुरन्त उन फूलों के बीच रख दिया। देखने में वह चिड़ियों का एक जोड़ा लग रहा था जो अपना घोंसला बना रहा था।

गुरुमाई जी मुस्कराईं। रॉबिन पक्षियों को अपना आशियाना मिल गया था।

मैंने गुरुमाई जी को धीमे-से अपने आपसे कहते हुए सुना, "मैं सोच रही हूँ, माँ रॉबिन कब अपने अण्डे देगी?"

कुछ दिन बाद गुरुमाई जी उस घोंसले को देखने गईं। रॉबिन माता-पिता वहाँ नहीं थे, शायद भोजन की खोज में कहीं उड़ गए होंगे। गुरुमाई जी ने टोकरी के अन्दर झाँका।

पूरी तरह बन चुके उस घोंसले में बसेरा था, तीन छोटे-छोटे अण्डों का। गुरुमाई जी ने मुझे बाद में बताया कि फ़िरोज़ी रंग के वे अण्डे बहुत ही प्यारे और बेहद खूबसूरत थे।

उसके बाद, गुरुमाई जी हर रोज़ रॉबिन पक्षियों के उस घोंसले तक उन पक्षियों व उनके अण्डों को देखने जातीं। वे जब भी वहाँ जातीं, इस बात की जाँच ज़रूर करतीं कि पक्षियों के लिए पास ही में रखे गए प्याले में पर्याप्त पानी है ताकि रॉबिन आसानी से अपनी प्यास बुझा सकें, विशेषकर इसलिए क्योंकि उस बार गरमी बहुत पड़ रही थी। धीरे-धीरे, अण्डों में दरारें पड़ती दिखाई देने लगीं और फिर वे कुछ हिलने-डुलने लगे—और आख़िरकार उनमें से बच्चे बाहर आ गए।

इसी दौरान, जब बच्चे अण्डों से बाहर आ रहे थे और फिर जब उनके पंख निकल रहे थे, एक कौतूहलपूर्ण बात घटी। दोनों ही रॉबिन पक्षी गुरुमाई जी को अच्छी तरह पहचानने लगे थे—*वाक़ई* अच्छी तरह पहचानने लगे थे। ऐसा लगता था कि वे गुरुमाई जी के आस-पास बड़ी सहजता महसूस कर रहे हों। कभी-कभी जब माँ रॉबिन को महसूस होता कि गुरुमाई जी उसके बच्चों से मिलना चाहती हैं तो वह घोंसले से बाहर फुदककर पास की टहनी पर बैठ जाती ताकि गुरुमाई जी बच्चों को अच्छी तरह से देख सकें। और जब गुरुमाई जी वहाँ से जाने के लिए मुड़तीं तो वे आँख की कोर से देखतीं कि माँ रॉबिन उड़कर फिर घोंसले की ओर आ रही है।

जल्द ही, हम स्टाफ़-सदस्यों में से कइयों को रॉबिन पक्षियों व गुरुमाई जी के साथ उनके संवाद के बारे में पता चला; हम माँ रॉबिन के असामान्य व्यवहार पर भी ग़ौर करने लगे। गुरुमाई जी जब आश्रम के विभिन्न स्थानों पर जातीं, यहाँ तक कि दूर-दूर के भागों में भी जातीं, तो माँ रॉबिन गुरुमाई जी के पीछे-पीछे जाने लगी। जब गुरुमाई जी बाहर कुछ लोगों से बात कर रही होतीं तो माँ रॉबिन एक सटीक-सा पेड़ चुनकर उसकी सटीक-सी डाल पर बैठ जाती और फिर उस डाल पर इधर से उधर तक फुदकती ताकि वह गुरुमाई जी को खूब अच्छी तरह से देख सके। और जब गुरुमाई जी अन्दर दर्शन दे रही होतीं, तब माँ रॉबिन पौधे की झूलती हुई टोकरी के किनारे पर बैठी रहती—और, ज़रूरत पड़ने पर, हर उस पक्षी को भगा देती जो गुरुमाई जी को देखते हुए उसकी नज़र में रुकावट बन रहा होता।

मुझे याद है, एक दिन दोपहर को मैं बिल्डिंग के दूसरे छोर पर एक सेवा-कार्य कर रही थी। अचानक मुझे चहचहाने की आवाज़ सुनाई दी। वातावरण को चीरता हुआ वह ऊँचा स्वर चारों ओर गूँज रहा था। वह ध्वनि *लगातार* आ रही थी; स्पष्ट था कि यह पक्षी किसी ख़ास अभियान में लगा हुआ है। एक मिनट बीता; दो मिनट बीते; तीन, चार, पाँच, सात मिनट हो गए—फिर भी वह कूजन चलता ही रहा।

मैं सोचने लगी कि इस तरह गाने वाला भला कौन-सा पक्षी हो सकता है! तभी मुझे माँ रॉबिन याद आई। *क्या यह वही है?* मैंने सोचा। *जब मैं उसके पास से गुज़रती हूँ, तब वह कभी झाँककर नहीं देखती। मैंने तो उसे बस तभी गाते हुए सुना है जब गुरुमाई जी आस-पास होती हैं।*

तुरन्त मेरे मन में विचार आया : *रुको! क्या इसका यह मतलब है कि गुरुमाई जी आस-पास ही हैं? मुझे नहीं लगता; मुझे नहीं पता कि दिन के इस समय गुरुमाई जी बाहर आती हैं।*

पर मुझे जानना *ही था* कि बात क्या है। इसलिए, मैं बाहर गई और उस कूजन की दिशा में चलने लगी। मैं चलती गई और धीरे-धीरे उस ध्वनि के स्रोत के निकट पहुँचती गई। और फिर, निश्चितरूप से, मुझे गेरुए रंग के वस्त्रों की झलक दिखाई दी। ऐसा लगा कि वातावरण के नन्हें-नन्हें कणों में बदलाव हो रहा हो, वे एक नया रूप ले रहे हों और एक नूतन व अधिक समरसता भरे वातावरण का निर्माण कर रहे हों। गुरुमाई जी थीं वहाँ। और गुरुमाई जी की उपस्थिति का सन्देश देती हुई रॉबिन भी वहीं थी।

उस दृश्य को निहारते हुए मुझे महसूस हुआ कि मेरी आँखें चमक उठी हैं। मेरा हृदय इतना आनन्दविभोर हो उठा कि मैं फूली नहीं समा रही थी! मैं अपने उत्साह को रोक नहीं पा रही थी। अनायास ही मेरे हाथ ऊपर उठ गए और मैं झूमते हुए नृत्य-सा करने लगी। मैं कह उठी, "वह आपके लिए गा रही है, गुरुमाई जी! सिर्फ़ आपके लिए। यक़ीन कीजिए, वह आपके लिए ही गा रही है!"

पूरी गरमियों के दौरान ऐसा ही होता रहा, माँ रॉबिन गुरुमाई जी के पीछे-पीछे घूमती रहती; और जैसे-जैसे एक-एक माह गुज़रता जा रहा था, ऐसा लग रहा था कि गुरुमाई जी के सान्निध्य में रहने की माँ रॉबिन की ललक बढ़ती जा रही है। उसका कूजना और भी तेज़ व मधुर होता जा रहा था और वह गुरुमाई जी के आस-पास और भी अधिक दिखने लगी थी। कभी-कभी पिता रॉबिन भी उसके साथ आ जाता, लेकिन आमतौर पर जब माँ रॉबिन दर्शन करने व पूरे परिवार के लिए आशीर्वाद लेने जाती, तब वह घोंसले में ही बैठकर बच्चों की देखभाल व रखवाली करता रहता।

गरमियों के अन्त में जब मौसम ठण्डा होने लगा तब रॉबिन परिवार गरम वातावरण की खोज में आश्रम परिसर छोड़कर चला गया। उनके चले जाने के बाद, शुरू में कुछ दिन उनकी कमी स्पष्टरूप से महसूस होती रही। मुझे याद है, तब मैं सोचती, *क्या रॉबिन और उसका परिवार वापस लौटकर आएगा?*

अब सीधे आते हैं, एक वर्ष आगे, सन् २०१२ के जून माह में। एक बार फिर, गरमियों का मौसम आ पहुँचा था। दिन फिर से सूरज की चमकती धूप में नहाए हुए होते। गुरुमाई जी के दर्शन-स्थान के बाहर झूलती टोकरियों में पौधे खिलने लगे थे। और जल्द ही, जाना-पहचाना-सा दिखने वाला पक्षियों का एक जोड़ा इन पौधों के आस-पास अचानक दिखाई देने लगा। हाँ, रॉबिन पक्षी लौट आए थे!

हमें कैसे मालूम हुआ कि ये वही पक्षी हैं जो पिछले साल यहाँ आए थे? जब मैं कह रही हूँ कि यह *बिलकुल स्पष्ट* था तो मेरा विश्वास कीजिए कि ये वही रॉबिन पक्षी थे। गुरुमाई जी को देखते ही माँ रॉबिन गाने लगी। गुरुमाई जी जहाँ भी जातीं, वह उनके पीछे-पीछे जाती; जब गुरुमाई जी टहलने जातीं, तब भी वह पूरे रास्ते उनके साथ-साथ जाती—और फिर भी, टहलकर लौटते हुए, वह दरवाज़े पर आ पहुँचती, मानो उसे गुरुमाई जी का स्वागत करने की विशेष खुशी पानी हो। अब तो वह गुरुमाई जी को भेंट भी अर्पित करने लगी थी—जब-तब वह अपनी चोंच खोलकर, गुरुमाई जी के समक्ष एक छोटा-सा कीड़ा रख देती।

मुझे आश्चर्य हुआ; *क्या यह सम्भव है कि एक साल के विरह ने रॉबिन के हृदय में गुरुमाई जी के प्रति अनुराग को, स्नेह को और भी गहरा कर दिया हो?* निश्चित रूप से ऐसा ही लग रहा था।

उसी ग्रीष्मकाल के दौरान एक बार गुरुमाई जी ने कहा, "इन रॉबिन चिड़ियों को नाम देने का समय आ गया है जिन्होंने मुझे इतना प्यार दिया है।"

गुरुमाई जी ने पास ही में उड़ रही माँ रॉबिन को प्यार से देखा और कहा, "तुम्हारा नाम है, मामारू।" फिर उन्होंने मुड़कर उसी प्यारभरी दृष्टि से पिता रॉबिन की तरफ़ देखा जो अपने स्थान पर बैठा था। "और तुम पापारू हो।"

यह सुनकर कि गुरुमाई जी ने इन दोनों पक्षियों को नाम दिए हैं, मेरा हृदय द्रवित हो उठा। वे दोनों सचमुच आश्रम-जीवन का हिस्सा बन चुके थे, और मैं कृतज्ञ थी कि अब हम उन्हें इन्हीं प्यारे-प्यारे नामों से सम्बोधित कर सकते हैं, विशेषकर इसलिए क्योंकि हम सतत उन्हीं की बातें किया करते थे! उदाहरण के लिए, एक बार गुरुमाई जी हममें से कुछ लोगों के साथ इस विषय पर बात कर रही थीं

कि भगवान कैसे अनेक रूपों में आते हैं और विभिन्न तरीक़ों से सन्देश देते हैं। तुरन्त ही कोई कह उठा, "भगवान का एक रूप है, मामारू!"

जब मामारू, पापारू और उनका परिवार उस ग्रीष्मकाल के अन्त में चला गया तो मेरे मन में आया कि *निश्चित ही* यह आख़िरी मौक़ा था जब हम उन रॉबिन पक्षियों को देख पाए। वैसे भी, यह बात बड़ी असाधारण-सी लग ही रही थी कि वे दूसरे मौसम में भी हमें आश्रम परिसर में दिखे थे।

उसके बाद कुछ समय तक हमने उन्हें आश्रम परिसर में दोबारा नहीं देखा। मगर फिर, मामारू और पापारू के पहली बार आश्रम परिसर में आने के लगभग आठ साल बाद, वर्ष २०१९ के मई माह में, गुरुमाई जी का ध्यान गया कि हेमलॉक के पेड़ पर चिड़िया का एक घोंसला दिख रहा है; यह पेड़ झूलने वाले पौधों से ज़्यादा दूर नहीं था। दिलचस्प बात यह है कि यह घोंसला उन खिड़कियों से कुछ ही इंच दूर था जिसके पास से होकर गुरुमाई जी अक़्सर गुज़रती हैं।

तत्पश्चात् जल्द ही, एक दिन जब गुरुमाई जी बाहर टहल रही थीं, तभी उनका अभिवादन करने, पंखों के गुच्छे जैसा कोई या वैसी ही कोई चीज़ एकाएक झूलकर नीचे आई। यह तो . . . एक रॉबिन पक्षी था! तुरन्त ही, यह रॉबिन इधर-उधर गुरुमाई जी के पीछे-पीछे घूमने लगी, उनके लिए गाने लगी। उसके इस व्यवहार को पहचानकर गुरुमाई जी ने कहा, "वह ज़रूर मामारू और पापारू के वंश की होगी—एक अन्य पीढ़ी की।"

गुरुमाई जी ने मुझे बताया है कि वसन्त के आरम्भ में, अब हर वर्ष जब भी वे श्री मुक्तानन्द आश्रम में, प्रथम रॉबिन पक्षियों को आते हुए देखती हैं तो वे पक्षी हमेशा ही उन्हें मामारू व पापारू की याद दिला देते हैं। वे उन पर नज़र भी रखती हैं और ध्यान से सुनती भी हैं ताकि उन्हें मामारू के किसी वंशज का कोई स्पष्ट चिह्न मिल जाए। और वे आते ज़रूर हैं। जब गुरुमाई जी को स्पष्टतः नज़र आने वाली किसी जगह पर कोई घोंसला दिखता है या जब उन्हें रॉबिन पक्षियों का मधुर गान *बिलकुल पास* से सुनाई देता है तो वे जान जाती हैं कि वे आ गए हैं।

गुरुमाई जी ने कहा है, "सभी पशु-पक्षी जो आश्रम में आते हैं, वे आश्रम के लोगों को जानते हैं। जब उनका प्रवास का समय आता है तो वे चले जाते हैं, पर वे अपने लोगों से मिलने के लिए हमेशा वापस आते हैं।"

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।